हीरामन

बनाम

महाराष्ट्र राज्य

(2008 की आपराधिक अपील संख्या 1288)

31 जनवरी, 2013

{ए.के. पटनायक और एच.एल. गोखले, जे.जे.}

साक्ष्य अधिनियम, 1872-धारा 32-मृत्युकालिन कथनों की सुसंगतता-इस संबंध में न्यायालयों की क्या पहुंच होनी चाहिए-अभिनिर्धारित:- किसी व्यक्ति के मरते समय उसकी मृत्यु के बारे में जो कथन किया जाता है उसके बारे में विधायिका के द्वारा धारा 32 (1) साक्ष्य अधिनियम को अधिनियमित करते समय विशिष्ट प्रावधान किये गये-मृत्यु के समय व्यक्ति झूठ नहीं बोलता-इसके अतिरिक्त मृत्युकालिक कथन मरने वाले व्यक्ति के द्वारा बिना किसी प्रभाव के अतिशीघ्र अवसर पर किया जाना चाहिए और किसी व्यक्ति के मृत्यु के कारण के संबंध में अन्य कोई दूसरा दृष्टिकोण नहीं दिया जा सकता-इसकी सुसंगतता किसी अन्य पुष्टि के अभाव में कम नहीं होती। अतिश्योक्ति अथवा शंकाओं के अतिरिक्त, पुष्टि के अभाव में, बिना गुणावगुण के दोषमुक्ति की ओर प्रवृत्त होगा, इससे सामाजिक ताना बाना एवं न्याय को गंभीर क्षति कारित होगी-तथ्यों के

आधार पर, अपीलार्थी की पत्नी के द्वारा की गई मृत्युकालिक घोषणा उसकी जलने से आयी चोटों का वास्तविक कारण बताती है-पीडिता 91 प्रतिशत जलने की चोटों से पीड़ित थी। उस समय सक्षम मजिस्ट्रेट का उपलब्ध होना और पीडिता का विस्तृत प्रश्नोत्तर रूप में कथन लेखबद्ध किये जाने का समय नहीं था - उक्त कारकों की अनुपस्थिति में जो मृत्युकालिक कथने लेखबद्ध किया गया उसका साक्षिक मूल्य कम नहीं होता है-अतिशीघ्र अवसर पर दो मृत्युकालिक घोषणाएं लेखबद्ध की गई थी-जिसमे अपराध कारित किया जाने का हेतुक सम्मिलित था, पीडिता को जलने की चोटें क्यों कारित की गई उसका कारण भी सम्मिलित था जैसे कि अपीलार्थी को यह लालच था कि पीडिता ने उसकी तरफ झुकने से इंकार कर दिया था एवं अपीलार्थी ने मिट्टी का तेल डालकर उसको आग लगा दी थी। इसे अतिशीघ्र अवसर पर और पवित्र अवसर पर लेखबद्ध किया गया था जिससे इस कथन का त्यागने का कोई कारण नहीं था। बचाव पक्ष के द्वारा जो कहानी प्रस्तुत की गई वह अभिलेख पर जो तथ्य थे उनसे पूर्णतः असंगत थी, सोची समझी कहानी थी, इसलिए अस्वीकार्य थी-अभियोजन ने अपना मामला युक्तियुक्त संदेह से परे साबित किया।

अपीलार्थी की पत्नी की मृत्यु 91 प्रतिशत जलने की चोटों के कारण अप्राकृतिक रूप से हुई। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी इसके लिए उत्तरदायी माना, मुख्य रूप से उसके मृत्युकालिन कथनों के आधार पर उसे

क्रूरता एवं हत्या अन्तर्गत धारा 498ए, एवं 302 भा.द.स. में दोषसिद्ध किया। आपराधिक अपील में उच्च न्यायालय के द्वारा अन्तर्गत धारा 302 भादस की दोषसिद्धी पुष्ट की गई। यद्यपि पर्याप्त साक्ष्य के अभाव में धारा 498ए भा.द.स. को अपास्त किया गया। मृतका ''सी जिसने जलने की चोटों का सत्य कारण बताया, विचारण न्यायालय ने दो मृत्युकालिक घोषणाओं को स्वीकार किया जो कि अपीलार्थी के द्वारा कारित की गई थी। उन्होंने अपीलार्थी का यह बचाव अस्वीकार किया कि वह घटना के समय मृतका के पास मौजूद नहीं था और वह इसके लिए उत्तदायी नहीं था केवल मात्र मृत्युकालिक घोषणाओं के आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा निर्णय पारित किये जाने को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई।

प्रस्तुत अपील मृत्युकालिक घोषणाओं की सुसंगतता के संबंध में प्रश्न उठाती है, न्यायालयों के द्वारा उसके संबंध में क्या सोच होनी चाहिए यह भी बताती है।

न्यायालय द्वारा अपील को खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया

अभिनिर्धारित किया:-1.1 मृत्युकालिक घोषणाओं के आधार पर अपीलार्थी की पत्नी ने उसको कारित जलने की चोटों के बारे में सही कारण बताया। पीड़िता को 91 प्रतिशत जलने की चोटें कारित थी। उस समय सक्षम मजिस्ट्रेट के द्वारा प्रश्नोत्तरी रूप में पीडिता के कथन लेखबद्ध किये

जाने को समय नहीं था। इस आधार पर उक्त अभिलिखित कथनों का साक्ष्यिक मूल्य कम नहीं होता। (पैरा 8) (131-एफ-जी)

1.2 विधायिका के द्वारा धारा 32(1) साक्ष्य अधिनियम को अधिनियमित करते समय विशिष्ट प्रावधान किये गये-मृत्यु के समय व्यक्ति झूठ नहीं बोलता- इसके अतिरिक्त मृत्युकालिक कथन मरने वाले व्यक्ति के द्वारा बिना किसी प्रभाव के अतिशीघ्र अवसर पर किया जाना चाहिए और किसी व्यक्ति के मृत्यु के कारण के संबंध में अन्य कोई दूसरा दृष्टिकोण नहीं दिया जा सकता। इस कथन को सत्य एवं सुसंगत मानते हुए स्वीकार किया जाना चाहिए, क्योंकि इससे मृत्यु कारित होने की परिस्थितियां स्पष्ट होती है। अन्य किसी सम्पुष्टि के अभाव में इसकी सुसंगतता कम नहीं होती। अतिश्योक्ति अथवा शंकाओं के अतिरिक्त, पुष्टि के अभाव में, बिना गुणावगुण के दोषमुक्ति की ओर प्रवृत्त होगा, इससे सामाजिक ताना बाना एवं न्याय को गंभीर क्षति कारित होगी। हमारे समाज में दुर्भाग्यपूर्ण रूप से लगातार पत्नियों को आग लगाये जाने की घटनाएं हो रही है, न्यायालयों से इस सोच की अपेक्षा है कि ऐसी स्थितियों को बहुत ध्यान से, मृत्युकालिक घोषणाओं को सही रूप से विचार में लेते हुए एवं काल्पनिक संदेहों से प्रभावित नहीं होते हुए विचार में लेना चाहिए। (पैरा 17) (138-जी-एचः 139-ए-सी)

1.3 अतिशीघ्र अवसर पर दो मृत्युकालिक घोषणाएं लेखबद्ध की गई थी- जिसमे अपराध कारित किया जाने का हेतुक सम्मिलित था, पीडिता को जलने की चोटें क्यों कारित की गई उसका कारण भी सम्मिलित था जैसे कि अपीलार्थी को यह लालच था कि पीडिता ने उसकी तरफ झुकने से इंकार कर दिया था एवं अपीलार्थी ने मिट्टी का तेल डालकर उसको आग लगा दी थी। इसे अतिशीघ्र अवसर पर और पवित्र अवसर पर लेखबद्ध किया गया था जिससे इस कथन का त्यागने का कोई कारण नहीं था। बचाव पक्ष के द्वारा जो कहानी प्रस्तुत की गई वह अभिलेख पर जो तथ्य थे उनसे पूर्णतः असंगत थी, सोची समझी कहानी थी, इसलिए अस्वीकार्य थी- अभियोजन ने अपना मामला युक्तियुक्त संदेह से परे साबित किया। (पैरा 18) (139-डी-एफ)

1.4 उपरोक्त विधिक स्थिति एवं अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों की दृष्टि में, विचारण न्यायालय के द्वारा जो निर्णय एवं आदेश पारित किया गया और जिसे उच्च न्यायालय के द्वारा संशोधित और पुष्ट किया गया उसमें हस्तक्षेप करने को कोई कारण नहीं है। (पैरा 19) (139-जी)

खुशाल राव बनाम बॉम्बे राज्य ए.आई.आर. 1958 एससी 22: 1958 एससीआर: मन्नु राजा बनाम मध्यप्रदेश राज्य 1976 (3) एससीसी 104: 1976 (2)एससीआर 764 -गुलाम हुसैन बनाम दिल्ली राज्य 2000 (7) एससी 254 2000 (2) पूरक एससीआर 141

कनक सिंह राज सिंह बनाम गुजरात राज्य एआईआर 2003 एससी 691 बाबुलाल बनाम मध्यप्रदेश राज्य एआईआर 2004 एससी 846 ;2003 (5) पूरक एससीआर 54 शिवाजी साहेब राव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य एआईआर 1973 एससी 26221974 (1) एससीआर 489 यूपी राज्य बनाम कृष्णा गोपाल एआईआर 1988 एससी 2154; 1988 (2)

पूरक एससीआर 391 गुरूबचन सिंह बनाम सतपाल सिंह एआईआर 1990 एससी 209: 1989 (1) पूरक एससीआर 292 गंगाधर बहेरा बनाम पंजाब राज्य 2003 (7)एससीसी 643; 2003 (2) पूरक एससीआर 35 लखन बनाम मध्यप्रदेश राज्य 2010 (8) एससीसी 514; 2010 (9) एससीआर 705 -का अनुसरण किया गया।

पी. मनी बनाम तमीलनाडू राज्य 2006 (3) एससीसी 161; 2006 (2) एससीआर 486 -का अनुसरण किया गया।

विधिक प्रकरण जिनका अनुसरण किया गया:

2006 (2) एससीआर 486	उल्लेखित किया गया	खंड 7
1958 एससीआर 552	अनुसरण किया गया	खंड 7
1976 (2) एससीआर 764	अनुसरण किया गया	खंड 10
2000 (2) पूरक एससीआर 141	अनुसरण किया गया	खंड 11

एआईआर 2003 एससी 691	अनुसरण किया गया	खंड 12
2003 (5) पूरक एससीआर 54	अनुसरण किया गया	खंड 12
1974 (1) एससीआर 489	अनुसरण किया गया	खंड 13
1988 (2) पूरक एससीआर 391	अनुसरण किया गया	खंड 14
1989 (1) पूरक एससीआर 292	अनुसरण किया गया	खंड 15
एआईआर 2002 एससी 3633	अनुसरण किया गया	खंड 16
2003 (2) पूरक एससीआर 35	अनुसरण किया गय	खंड 16
2010 (9) एससीआर 705	अनुसरण किया गया	खंड 16

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 1288/2008

जावेद महमूद राव अपीलार्थी की ओर से।

संजय वी. खरडे, आशा रूपानंद नय्यर प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय एच.एल.गोखले जे. के द्वारा पारित किया गया।

1. यह आपराधिक अपील मृत्युकालिक घोषणाओं की सुसंगतता के संबंध में प्रश्न उठाती है एवं इसके संबंध में न्यायालयों की क्या सोच होनी चाहिए। अपीलार्थी की पत्नी, चन्द्रकला हीरामन मुकुते, 07.04.2000 को

लगभग 2 ए.एम. पर गांव जामखेड तालुका जिला अहमद नगर महाराष्ट्र राज्य में अप्राकृतिक एवं दर्दनाक मृत्यु पिछली रात में 91 प्रतिशत जलने की चोटों एवं हृदय एवं श्वसन तंत्र विफलता के कारण हुई। प्रथम तदर्थ अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश अहमद नगर ने अपीलार्थी को इसके लिए उत्तरदायी माना, मृत्युकालिक घोषणाओं के आधार पर और उसे धारा 498ए, 302 भारतीय दंड सहिंता (भा.द.स. संक्षेप में) अपने निर्णय एवं आदेश दिनांकित 16.08.2004 सत्र प्रकरण संख्या 103/2000 के द्वारा क्रूररता एवं हत्या के लिए दोषसिद्ध किया। आपराधिक अपील संख्या 31/2005 के द्वारा बॉम्बेे उच्च न्यायालय की औरंगाबाद पीठ के द्वारा धारा 302 भादस के तहत दोषसिद्धी को पुष्ट किया गया। यद्यपि धारा 498 ए भादस को पर्याप्त साक्ष्य के अभाव में अपास्त किया गया। निचले न्यायालयों के द्वारा मृतका चन्द्रकला के द्वारा उसकी जलने की चोटों के सही कारण के संबंध में दो मृत्युकालिक घोषणाओं को स्वीकार किया गया की वे अपीलार्थी के द्वारा कारित की गई थी। उन्होनंे अपीलार्थी के इस बचाव को अस्वीकार कर दिया कि वह घटना के लिए जिम्मेदार नहीं था एवं घटना के समय मृतका के पास मौजूद नहीं था। धारा 302 भादस में दोषसिद्धी के आधार पर अपीलार्थी को आजीवन कारावास, 500 रूपये का जुर्माना, उसके व्यतीक्रम में 3 महीने का कठोर कारावास भुगतना है। उच्च न्यायालय का निर्णय दिनांकित 28.06.2005 आपराधिक अपील संख्या

31/2005 केवल मात्र मृत्युकालिक घोषणाओं के आधार पर परित किया गया चुनौती दी गई।

प्रस्तुत अपील के प्रमुख तथ्य इस प्रकार है:-

2. मृतका चंद्रकला अपीलार्थी की लंबे समय से विवाहिता पत्नी थी। उसके तीन बच्चे थे जो कि बापू उम्र लगभग 20-22 वर्ष और घटना के समय विवाहित था, रमेश उम्र लगभग 14 वर्ष और पुत्री शोभा (जिसकी उम्र का उल्लेख नहीं किया गया)। आरोप पत्र के अनुसार, अपीलार्थी ने 06.04.2000 को लगभग 8 पी.एम. पर चन्द्रकला पर केरासिन डालकर आग लगा दी। उसे ग्रामीण अस्पताल जामखेड में तुरंत 09.15 पी.एम. पर भर्ती करवाया गया। एक डाक्टर एकनाथ मुंडे (पी डब्ल्यु 05) उस समय कार्यरत था और उसने चोटों का विवरण (प्रदर्श पी 33) लगभग उसी समय निम्नलिखित शब्दों में लेखबद्ध किया-

"एच/ओ पति के द्वारा मानव वध कारित करने के लिए जलाना क्योंकि वह उसकी बहन के साथ विवाह कराने की इच्छुक नहीं थी और वह 06.04.2000 को लगभग 08 पी.एम. पर स्वर्ण की मांग भी कर भी कर रहा था।"

इस प्रकार उक्त लेख के अनुसार, अपीलार्थी चंद्रकला से उसके माता-पिता के यहां से स्वर्ण लाने की जिद्द कर रहा था, और उसे उसकी बहन से

विवाह करने की अनुमति दी जावे। चंद्रकला ने उक्त दोनों मांग माने जाने से इंकार कर दिया और इसलिए उसे गंभीर जलने की चोटें उसके अपीलार्थी पति द्वारा उसी दुर्भाग्यपूर्ण रात को कारित की गई और यह गंभीर चोटें कारित की गई। उसके छोटे भाई रमेश (डी डब्ल्यु 01) के अनुसार मृतका को उसके परिवार के सदस्यों द्वारा अस्पताल ले जाया गया। इस प्रकार से डाक्टर के द्वारा उनकी उपस्थिति में लिखित उक्त लेख महत्वपूर्ण हो जाता है। मुख्य आरक्षी डागाडु बाबा खरात (पी डब्ल्यु 04) अस्पताल में अपने कर्तव्य पर आया तो उक्त चिकित्सक ने उसे घटना के बारे में सूचित किया, और यह भी चंद्रकला अभी भी कथन करने की स्थिति में थी। पी डब्ल्यु 04 ने चंद्रकला के द्वितीय कथन (प्रदर्श पी 28) डी डब्ल्यु 05 की उपस्थिति में लेखबद्ध किये। नर्सिंगकर्मी ने पीडब्ल्यु 05 के द्वारा यह प्रमाणित किये जाने पर कि वह कथन करने की स्थिति में थी। चंद्रकला ने कथन किया कि अपीलार्थी ने उसके उपर दस लीटर के ड्रम में से उसके उपर केरोसीन तेल डाला और उसको आग लगी दी क्योंकि उसने एक तोला सोने की अंगूठी की मांग से इंकार कर दिया था और उसके मामा से उसके नाम भूमि अंतरण कराने से भी इंकार कर दिया था। इस कथन के अनुसार एक पडौसी बाबा साहेब विटेकर ने आग को बुझाया और तब उसे अस्पताल ले जाया गया। तत्पश्चात उसको उसके कथन पढ़ाये जाकर उसकी अंगूठा निशानी लगाई गई। इस द्वितीय मृत्युकालिक घोषणा को प्रथम सूचना रिपोर्ट के रूप में लिया गया और 10.10 पीएम पर अपराध संख्या

44/2000 अन्तर्गत धारा 307 भादस हत्या का प्रयास के रूप में दर्ज की गई। चंद्रकला उस समय बयान करने हेतु बहुत अच्छी स्थिति में थी और किसी भी दवा के प्रभाव में नहीं थी। उसे लगभग 10.30 पीएम पर केवल निश्चेतक दिये गये थे। कथन लेखबद्ध किये जाते समय उसके दो पुत्र और अपीलार्थी उपस्थिति थे। जैसा कि रमेश (डी डब्ल्यु 01) के द्वारा कथन किया गया है कि सभी परिवार के सदस्यों के द्वारा उसको अस्पताल ले जाया गया था। अपीलार्थी ने अन्तर्गत धारा 313 दंड प्रक्रिया सहिंता के कथनों में यह कथन किया था कि वह भी अस्पताल गया था। चन्द्रकला की माताजी एवं भाई उस समय उपस्थित नहीं थे। वे उसकी मृत्यु के पश्चात अस्पताल पहुंचे थे। उसकी मृत्यु के पश्चात आरोप अन्तर्गत धारा 307 के स्थान पर धारा 302 में परिवर्तित किया गया।

3. विचारण के दौरान अभियोजन द्वारा पांच गवाहों का परीक्षण किया गया। पीडब्ल्यु 01 डाक्टर अभिजीत बोरालकर जिन्होनंे शव परीक्षण कर मृत्यु के निम्नलिखत कारण बताये थेः-

"मृत्यु का कारण हृदय एवं श्वसन तंत्र विफलता, आघात एवं 91 प्रतिशत उपर से नीचे अत्यधिक जलने से"

इस प्रकार, मृत्यु के कारण के संबंध में कोई विवाद नहीं है। प्रश्न यह है कि उसे जलने की चोटें किस प्रकार कारित की गई। उसकी माताजी (पी डब्ल्यु 02) व भाई (पी डब्ल्यु 03) ने उसके द्वारा बताये गये वृतांत

का समर्थन किया कि किस प्रकार से उसे जलने की चोटें कारित की गई। जैसे कि अपीलार्थी ने उसे एक सोने की अंगूठी दिये जाने तथा उसके मामा की भूमि अंतरित करने हेतु पिछले दो माह से जिद कर कर रहा था और उसके इंकार करने पर उसके द्वारा यह घृणित कार्य किया गया। इस संबंध में अपीलार्थी का बचाव जो भी हो असंगत था। उसके धारा 313 सीआरपीसी के अन्तर्गत कथनों में दुर्घटनावश मृत्यु का कारण चुल्हे के फटने की संभावना के आधार पर बताया। अनुसंधान अधिकारी बी.आई. कांडरे जैसा कि श्रेणीवार कथन किया कि घटनास्थल के परीक्षण के दौरान कोई भटटी, चुल्हा या पकाने का सामान नहीं मिला। अपीलार्थी ने अपने बचाव में तीन गवाहों का परीक्षण करवाया। उसका छोटा भाई रमेश (डी डब्ल्यु 01) ने दूसरी तरफ कथन किया है कि उसकी मां ने आत्महत्या की थी। रमेश के द्वारा आत्महत्या संबंधी किया गया कथन फिल्मी था कि उसने अपनी माताजी से फिल्म देखने के लिए दो रूपये मांगे, जिससे उसने इंकार कर दिया। जिससे अपीलार्थी ने उसको डांटा जिसके कारण वह घर के अंदर चली गई और दरवाजे को बंद कर लिया। उसके पश्चात जब रमेश घर के बाहर खेल रहा था, और जब उसका बड़ा भाई और उसका पिता भी घर के बाहर थे, उसकी बहन शोभा जो कि पडौसी के मकान में खेल रही थी, चेतावनी दी कि चंन्द्रकला ने स्वयं को आग लगा दी है। रमेश के अनुसार अपीलार्थी छत पर चढ़ गया, एक लोेहे की चद्दर को हटा कर दरवाजे की कुंडी को खोलने के लिए अंदर कूदा तो उसने पाया कि मृतका जली हुई

अवस्था में फर्श पर पड़ी थी। अपीलार्थी का एक नजदीकी रिस्तेदार महासे, नागु, विटकर (डी डब्ल्यु 02) भी परीक्षित हुआ जिसने भी समान प्रकार की साक्ष्य दी। जहां तक रमेश डी डब्ल्यु 01 के कथनों का संबंध है उनकों अनुश्रुत साक्ष्य के आधार पर छोडा गया जो कि उससे शोभा के द्वारा कहे गये थे और शोभा परीक्षित नहीं हुई। इसके अतिरिक्त शोभा पडौसी के मकान में जहां कि वह खेल रही थी मृतका के मकान से करीब 150 फीट की दूरी पर था और उन दोनों मकानों के मध्य कई मकान स्थित थे।

प्रस्तुत किये गये तथ्यों पर विचार:

4.हमारे समक्ष प्रश्न यह है कि चंद्रकला को जलने की चोटें कैसे आयी। हमारे समक्ष इस संबंध में दो अभिमत है जैसे की अपीलार्थी ने उसके उपर केरोसिन डाला, और मृतका ने स्वयं उसके उपर केरोसिन डाला। मृतका के द्वारा दिया गया अभिमत अतिशीघ्र अवसर पर उसके लेखबद्ध कथनों का है। उनके पास कोई कारण नहीं था कि उन्होंने क्या लेखबद्ध किया, जब तक कि उसने ऐसा कथन किया। उस पवित्र अवसर को विचार में लेते हुए जबकि वह कथन कर रही थी, असत्य मानते हुए उनको इंकार किये जाने का कोई कारण नहीं था। प्रथम कथन 09.15 पीएम पर लेखबद्ध किया गया। घटना के एक घंटा और 15 मिनट पश्चात जब उसे अस्पताल में ले जाया गया। द्वितीय कथन लगभग 10.10 पीएम पर एक घंटे के अंदर उसके पश्चात लेखबद्ध किया गया। उस समय चंद्रकला पूर्णतया सचेत थी

और लगभग 10.30 पीएम पर उसको निश्चेतक दिये गये। यह कथन महत्वपूर्ण रूप से स्वीकार किये जाने योग्य है क्योंकि जब इसकों लेखबद्ध किया गया उस समय उसके परिवार के सदस्य अपीलार्थी को सम्मिलित करते हुए उपस्थित थे। इसके अतिरिक्त उसके भाई और उसकी माताजी ने क्रमिक रूप से उसके कथनों को पुष्ट किया था कि उसका पति लालची था, उसको अपनी मांगों के लिए परेशान करता था। उनको सिखाये जाने का कोई अवसर नहीं था क्योंकि वो उसकी मृत्यु के पश्चात अस्पताल पहुंचे थे। अपीलार्थी की ओर से यह तर्क भी किया गया कि अभियोजन की ओर से बाबा साहेब बिटेकर (जिसने की आग बुझाई) को परीक्षित कराने में विफल रहना घातक था। इस संबंध में हमें यह मानना चाहिए कि जब चंद्रकला पर केरोसिन डाला गया और आग लगी उस समय बाबा साहेब वहां पर मौजूद नहीं थे। वह उसके पश्चात आग बुझाने आया और घटना कैसे घटी उसके संबंध में किसी प्रकार का प्रकाश नहीं डाल सका।

5.अपीलार्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता ने मुख्य रूप से तर्क दिया कि जहां तक चंन्द्रकला के दो मृत्युकालिक घोषणाओं का संबंध है उनकी पुष्टी नहीं हुई है और अपुष्ट मृत्युकालिक घोषणाएं स्वीकार नहीं की जा सकती। यह भी तर्क दिया गया कि आग लगाने के कारण के संबंध में दोनों मृत्युकालिक घोषणाओं के मध्य भिन्नता थी जबकि दो कथनों के मध्य भिन्नताओं का संबंध है। चन्द्रकला ने अपने प्रथम कथन में कथन

किया कि अपीलीर्थी उसकों परेशान करता था, उसके साथ दुर्रव्यवहार करता था क्योंकि वह उससे सोने की मांग करता था और उसकी बहन से जबकि वह इच्छुक नहीं थी, शादी कराने की मांग करता था। द्वितीय मृत्युकालिक घोषण में उसने फिर से कथन किया कि वह उससे सोने की मांग करता था किंतु यह भी कहा कि उसके मामा की भूमि अपने को अंतरित कराना चाहता था। इस समय उसने उसकी बहन से शादी कराने के बारे में कोई कथन नहीं किया। दोनों कथनों में सोने की मांग किया जाना सामान्य घटक है। प्रथम कथन में उसने अतिरिक्त रूप से उसकी बहन से शादी करने का कथन किया है जबकि दूसरे में उसकी मामा की कृषि भूमि की मांग का कथन किया है। सत्र न्यायालय और उच्च न्यायालय के द्वारा इन भिन्नताओं को महत्व नहीं दिया गया और हमारे दृष्टिकोण में यह सही था, ऐसा इसलिए था क्योंकि किसी को यह समझना चाहिए कि चंद्रकला के 91 प्रतिशत जलने की चोटें थी। इससे पहले पदस्थापित चिकित्सक ने उससे घटना कैसे घटी के बारे में पूछा उसके पश्चात पदास्थापित मुख्य आरक्षी के द्वारा इसी प्रश्न को दोहराया गया। कोई भी व्यक्ति ऐसी स्थिति में केवल यही कहेगा कि वह इतना उस अवसर पर याद रख पाता। एक बार फिर से पूछने पर संबंधित व्यक्ति से यह आशा नहीं की जा सकती कि वह तोते की तरह कथन को दोहरा सके। एक चीज दोनों प्रश्नों में बहुत ही स्पष्ट है जैसे कि अपीलार्थी का लालच और उसके बारे में उसे परेशान किया जाना। इसके अतिरिक्त यह ध्यान में रखना सुसंगत है कि उसकी माताजी

और उसके भाई दोनों ने उसके कथनों की पुष्टी की है कि अपीलार्थी उससे भूमि और सोने की मांग कर रहा था। प्रारम्भिक रूप से चंद्रकला ने सोने की मांग और उसके बाद भूमि की मांग के बारे में बताया। इसे किसी भी रूप में सुधार का प्रयास नहीं माना जा सकता। इसी प्रकार से द्वितीय अवसर पर उसकी बहन से शादी किये जाने कि जिद्द का उल्लेख नहीं किया जाना उसके कथनों पर अविश्वास किया जाना नहीं माना जा सकता है।

6.इसके विरूद्ध जहां तक अपीलार्थी के द्वारा जो अभिमत प्रस्तुत किया गया था वह उसकी पुत्री शोभा के अनुश्रुत अभिमत पर आधारित है। जिसका कि अपीलार्थी के घर से 150 फीट की दूरी पर स्थित घर में खेलना बताया गया है। उसका परीक्षण नहीं हुआ है और जिसका अभिमत रमेश के द्वारा प्रस्तुत किया गया है एवं एक संभावित समानांतर कहानी प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। जबकि झूठ की सीमा तक यह कहानी अत्यधिक असंभावित है। चंद्रकला किसी मनोचिकित्सीय विकार से पीडित थी ऐसा भी अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया गया है। निचली अदालतों ने सही प्रकार से यह समानांतर अभिमत खारिज किया है क्योंकि इसका कोई आधार नहीं है। यह अभियोजन के द्वारा प्रस्तुत मत के विरूद्ध है जो कि इन परिस्थितियों में स्वीकार्य अभिमत है। प्रारंभिक रूप से 19.08.2002 को अपीलार्थी ने बचाव लिया कि चंद्रकला की शायद दुर्घटना

के कारण मृत्यु हुई। यह धारा 313 दंड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत पूछे गये प्रश्न संख्या 20 के उत्तर में देखा जा सकता है जिसमें कि उसने निम्न प्रकार से कथन किया हैः-

"मैनें कुछ नहीं किया, बिजली गई हुई थी, मैं घर पर उपस्थित नहीं था, वह चूल्हे पर खाना पका रही होगी। जहां चुल्हा फटा हो इसकी मुझे जानकारी नहीं मेरे पुत्र ने मुझे बताया कि उसकी माता को चोटें आई थी तब मैं अस्पताल गया था तत्पश्चात पुलिस ने मुझे पकड़ लिया और जेल भेज दिया। तत्पश्चात मैं अंदर था मेरे पास इकसे अतिरिक्त कहने के लिए कुछ नहीं था।"

इस प्रकार इस स्तर पर उसने यह नहीं कहा कि वह उसकी पत्नी को बचाने के लिए घर के अंदर कूदा हो, इसके अतिरिक्त उसने कहा कि वह कोई भी प्रतिरक्षा में गवाह प्रस्तुत नहीं करना चाहता है। लगभग 2 वर्ष पश्चात आत्महत्या के अभिवाक बाबत उसने 15.07.2004 को प्रतिरक्षा साक्षियों को परीक्षित कराया जो कि स्पष्ट रूप से पश्चातवृती सोच थी यह अत्यधिक स्पष्ट है कि रमेश (डी डब्ल्यु 01) को अपीलार्थी को अभियोग से बचाने के लिए प्रस्तुत किया गया था। यहां यह बताना भी सुसंगत है कि विचारण के दौरान 26.06.2002 से 14.04.2004 तक 20 महीने की अवधि तक अपीलार्थी मफरूर रहा था और उसने अपने आप को अत्यधिक

देरी से समर्पित किया था। यदि उसने उसकी पत्नी पर केरोसिन डालने का कृत्य नहीं किया तो उसके पास मफरूर रहने का कोई कारण नहीं था।

विधिक तर्क

7.अपीलार्थी की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा दो न्यायाधीशों की पीठ का इस न्यायालय का निर्णय पी. मनी बनाम तमिलनाडू राज्य जो कि {(2006) (3) एस.सी.सी 161} यह अभिमत रखने के लिए प्रस्तुत किया है कि अपुष्ट मृत्युकालिन घोषणा स्वीकार्य नहीं है। इस संबंध में प्रथमतः यह जरूरी है कि उस मामलें में मृतका महिला (जिसकी मृत्यु जलने की चोटों से कारित हुई) के पुत्र और पुत्री ने क्रमबद्ध कथन किया था कि वह अवसाद से ग्रसित थी और घटना से एक सप्ताह पहले उसने आत्महत्या की कोशिश की थी। इसके अतिरिक्त ऐसी कोई सामग्री नहीं थी जिससे यह दर्शीत होता हो कि अपीलार्थी मफरूर था और जिसे कि प्रयासों के बावजूद गिरफ्तार नहीं किया जा सकता था। उस मामले में न्यायालय ने विशिष्ट रूप से निम्नानुसार अवलोकन किया:

" 14. निर्विवादित रूप से केवल मात्र मृत्युकालिक घोषणा के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है । किंतु उसके लिए यह पूर्णतः विश्वसनीय होनी चाहिए।"

8. इस अपील में एक आधार चिकित्सक के द्वारा अभिलिखित कथन के संबंध में त्रुटि को इंगित करते हुए यह भी उठाया गया है कि इसको अभिलिखित किये जाने का समय नहीं था। किंतु उसमें किये गये सतही पृष्ठाकंन के आधार पर समय निश्चित किया। एक अन्य आधार जो इस अपील में उठाया गया है कि मुख्य आरक्षी फरात (पी.डब्ल्यु 04) जिसके द्वारा मृतका का कथन अभिलिखित किया गया था उसको भी मृत्यु कालिक घोषणा माना जा सकता है और साक्ष्य के रूप में पठनीय नहीं है क्योंकि इसे किसी राजपत्रित अधिकारी जैसे कि मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट और प्रश्नोत्तर रूप में अभिलिखित नहीं किया गया था। अपीलार्थी ने इस संबंध में इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ के निर्णय खुशाल राव बनाम बॉम्बे राज्य जो कि {ए.आई.आर. 1958, एस.सी. 22} के खंड 16 के उपखंड (5) में प्रकाशित हुआ है के मत को प्रस्तुत किया है। यह तर्क गलत रूप से प्रस्तुत किया है इस कारण से कि खंड 16 के उपखंड 5 की प्रस्थापना को इस खंड में प्रस्तुत अन्य प्रस्थापना से काटा नहीं जा सकता है जो कि बताती है कि जो कि मृत्युकालिक घोषणाओं की पहुंच के संबंध में अन्य आयामों को स्थापित करती है। जब हम उन आयामों को देखते है तो चंद्रकला की मृत्युकालिक घोषणाओं को अस्वीकार करने का कोई कारण नहीं है जो कि उसको कारित जलने की चोटों के संबंध में वास्तविक कारण बताती हो। चंद्र कला 91 प्रतिशत जलने की चोटों से पीडित थी। वहां किसी सक्षम मजिस्ट्रेट के पास जाने अथवा प्रश्नोत्तर रूप में उसका कथन

अभिलिखित किये जाने का समय नहीं था। इन कारकों की अनुपस्थिति के कारण अभिलिखित कथनों का साक्ष्यिक मूल्य कम नहीं होता है। इस खंड के आयाम निम्नानुसार है:

"16. साक्ष्य अधिनियम के सुसंगत प्रावधानों एवं इस न्यायालय एवं भारत के अन्य उच्च न्यायालयों द्वारा निर्णित भिन्न-भिन्न मामलों के पुनर्वालोकन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहंुचते है, मद्रास उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ की राय की सहमति ने जैसा कि पूर्व में कहा गया है कि (1) कि केवल मात्र मृत्युकालिक घोषणा जिसकी कि पुष्टि नहीं की गई है को दोषसिद्धी का आधार नहीं माना जा सकता, यह पूर्ण विधि नहीं मानी जा सकती। (2) प्रत्येक मामलें में किन परिस्थितियों में मृत्युकालिक घोषणा की गई यह उस मामले के तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए निर्धारित किया जा सकता है। (3)यह सामान्य प्रस्थापना नहीं की जा सकती कि अन्य साक्ष्यों की तुलना में मृत्युकालिक घोषणा एक कमजोर प्रकार की साक्ष्य है। (4) जिन आधारों पर अन्य साक्ष्य आधारित होती है उन्हीं आधारों पर मृत्युकालिक घोषणा आधारित होती है एवं उसका निश्चय समस्त परिस्थितियों के प्रकाश तथा साक्ष्य को गृहण करने वाले अन्य सिद्वांतो के संदर्भ में में किया जाता है । (5) एक मृत्युकालिक घोषणा जिसे कि सम्यक तरीके से सक्षम मजिस्ट्रेट के द्वारा अभिलिखित किया गया है या कहा जाये प्रश्नोत्तर रूप में और जहां तक व्यावहारिक है घोषणा

करने वाले के शब्दों में मृत्युकालिक घोषणा की अपेक्षा साक्ष्य में अत्यधिक तवज्जों रखती है जो कि मौखिक साक्ष्य पर निर्भर करता है जो कि मानव याददाश्त और मानव चरित्र की शिथिलताओं से प्रभावित हो सकती है और (6) मृत्युकालिक घोषणा पर विश्वास के परीक्षण के क्रम में न्यायालय को यह दृष्टिगत रखना चाहिए कि मृत्युकालिक व्यक्ति के निरीक्षण हेतु अवसर की क्या परिस्थितियां थी उदाहरण के तौर पर रात को जब अपराध कारित किया गया क्या उस समय पर्याप्त प्रकाश था, व्यक्ति के द्वारा जो तथ्य अभिलिखित किये गये है उनको याद रखने की क्या क्षमता थी, ऐसी परिस्थितियां से ग्रसित तो नहीं था जो कि कथन करते समय उसके नियंत्रण के बाहर थी। पदीय क्रम में अभिलिखित किये जाने के अतिरिक्त भी यदि भिन्न प्रकार के अवसर होते तो भी मृत्युकालिक घोषणा सुसंगत होती और मृत्युकालिक कथन शीघ्रतम अवसर पर लिया गया तथा हितबद्ध प्रक्षकारों के द्वारा सिखाया नहीं गया था।

9.इस संबंध में हम इस निर्णय के खंड 11 मृत्युकालिक कथन को स्वीकार करने के दृष्टिकोण के संबंध को भली-भांती संदर्भित कर सकते है। इस न्यायालय में (तत्कालीन बी.पी. सिन्हा जे.) के निर्णय पैरा उपखंड 11 में निम्नानुसार पाया:

"11. विधायिका ने बड़ी बुद्धमता से धारा 32 (1) भारतीय साख्य अधिनियम में यह अधिनियमित किया है कि " जब किसी व्यक्ति के द्वारा

अपनी मृत्यु के कारण के संबंध में कोई कथन किया जाता है या किसी समव्यवहार की परिस्थिति के संबंध में जिसके कारण की मृत्यु का परिणाम प्राप्त हुआ है, ऐसे मामलों में जिसमें कि किसी व्यक्ति के मृत्यु के कारण का प्रश्न उत्पन्न हुआ हैं' , इस प्रकार का मौखिक या लिखित प्रकार से किया गया कथन ऐसे व्यक्ति के द्वारा जो कि मर गया है (अनावश्यक शब्दों का लोप कर) अपने आन में एक सुसंगत तथ्य है। विधायिका के द्वारा यह प्रावधान सोच समझकर किया गया है कि वास्तविक आवश्यकता के मामलें में किसी सामान्य नियम के अपवाद के रूप में कि अनुश्रुत साक्ष्य कोई साक्ष्य नहीं होता और जो साक्ष्य जिसका कि प्रतिपरीक्षण नहीं किया गया है ग्राहय नहीं है। प्रतिपरीक्षा का उद्वेश्य किसी भी साक्षी के द्वारा किये गये कथनों की सत्यता को परीक्षित करना होता है। विधायिका की दृष्टि से वह परीक्षा पवित्र अवसर के द्वारा जबकि वह की गई है या ऐसा कथन व्यक्ति के द्वारा उस समय किया गया था जबकि वह अपने जीवन को खोने के खतरे में था इस प्रकार के गंभीर और पवित्र क्षण में किसी भी व्यक्ति से झूठ बोलने की अपेक्षा नहीं की जा सकती है, एवं द्वितीयक रूप से प्रतिपरीक्षा का परीक्षण उपलब्ध नहीं होगा। इस प्रकार के मामले में ऐसे कारणों से प्रतिपरीक्षा किया जाना संभव नहीं है। इस प्रकार के मामलों में ऐसे कारणों से शपथ दिलाये जाने की आवश्यकता भी नहीं होती है। इस प्रकार मरने वाले व्यक्ति के द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के बारे में किये गये कथन विधायिका के द्वारा स्वीकार किये गये है। प्रथम सिद्धांत के रूप

में एक विशिष्ट स्वीकृति दी जानी चाहिए। उन परिस्थितियों के अतिरिक्त जबकि ऐसी कोई साक्ष्य जिससे यह दर्शित होता हो कि कथन किसी ऐसे व्यक्ति के द्वारा किये गये है जिसे उसकी मृत्यु की आशा की संभावना नहीं थी, यही नहीं परिस्थितिया भी कथन कि ग्राहयता को प्रभावित कर सकती है एवं इसके भार को भी। साक्ष्य से यह दर्शित किया जा सकता है कि मृत्युकालिक घोषणा विश्वसनीय नहीं है क्योंकि इसे शीघ्रतम अवसर पर नहीं दिया गया और इस प्रकार यह विश्वास करने का युक्तियुक्त कारण था कि यह मरने वाले व्यक्ति के द्वारा मौखिक रूप से की गई, जबकि उसकी प्रतिरोध करने की शक्ति झूठ कहने के विरूद्ध दूर जाने को कह रही थी अथवा कथन सम्यक रूप से लेखबद्ध नहीं किया गया, उदाहरण के तौर पर हितबद्ध पक्षकारों की तत्परता के परिणामस्वरूप कथन लेखबद्ध किया गया एवं सूचक प्रश्नों को उत्तरों में था जो कि लेखबद्ध करने वाले अधिकारी के द्वारा पूछे गये एवं ऐसे व्यक्ति के द्वारा जो वह कथन करने के लिए तात्पर्यित था। कुछ ऐसी भी परिस्थितियां हो सकती है जो कि मृत्युकालिक घोषणा की गुणवत्ता को कम कर सकती है किंतु हमारे विचार में ऐसी कोई पूर्ण विधि अथवा नियम नहीं है या सामान्य प्रज्ञा का नियम नहीं है जो कि विधिक नियम के रूप में परिपक्व हुआ है कि एक मृत्युकालिक घोषणा जब तक कि वह किन्हीं अन्य स्वतंत्र साक्ष्य से सम्पुष्ट नहीं हो जाती उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता और वह दोषसिद्धी का आधार नहीं हो सकती। (जोर दिया गया)

10. खुशाल राव के निर्णय में सत्त रूप से अनुसरण एवं संदर्भित किया गया है इस प्रकार खुशाल राव में प्रस्तवों को संदर्भित करने के पश्चात इस न्यायालय ने मन्नूराजा बनाम मध्यप्रदेश राज्य जो कि (1976)(3 एससीसी 104) में प्रकाशित हुआ के खंड 7 में निम्नानुसार पाया है कि "7" विद्वान अधिवक्ता अपीलार्थीगण के द्वारा तर्क दिया गया है कि बहादुर सिंह के द्वारा किया गया मौखिक कथन विधिक दृष्टि से मृत्यृकालिक घोषणा नहीं मानी जा सकती, क्योंकि उसने घटना और उसकी मृत्यु के परिणाम वाले संव्यवहार के संबंध में पूर्णतः कथन नहीं किया। इस तर्क में कोई सार नहीं है क्योंकि इस क्रम में न्यायालय मृत्युकालिक घोषणा के साक्ष्यिक महत्व का निर्धारण करने की स्थिति में नहीं है, जिसकी आवश्यकता होनी चाहिए वह यह है कि मृतक के द्वारा किया गया पूर्ण कथन न्यायालय के समक्ष लेखबद्ध होना चाहिए इसकी शब्दों एवं अवधि में बिना किसी छेडछाड किये। विधि यह अपेक्षा नहीं करती कि मृत्युकालिन घोषणा करने वालें को घटना की अथवा मामलें की पूर्ण कहानी का उल्लेख किया जाना आवश्यक नहीं है। वास्तव में आम तौर पर पीडित यह कहने के योग्य था कि वह किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के द्वारा पीटा गया, यह या तो अचानक हमला होने से या दृश्यता कि स्थिति के कारण या पीडित का ऐसी शारीरिक स्थिति में होना जिससे कि वह घटना को पूरी तरह से बताने की स्थिति में ना हो वास्तव में अधिकांशतः

मृत्युकालिक कथन जो कि पूर्ण शब्दों में एवं स्पष्टतया बताई गई हो, सिखाये जाने का संदेह उत्पन्न करती है। (जोर दिया गया)

11.खुशाल राव और मन्नुराजा को गुलाम हुसैन बनाम दिल्ली राज्य जो कि (2000) (7 एससीसी 254) में प्रकाशित हुआ में संदर्भित एवं अनुसरित किया गया है जिसके पैरा 8 मे कोर्ट ने निम्न प्रकार से कहा है कि:

"8. साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 अनुश्रुत साक्ष्य के सामान्य नियम का अपवाद है और एक व्यक्ति के द्वारा लिखित अथवा मौखिक रूप से किये गये कथन सुसंगत तथ्यों के संबंध में उसकी मृत्यु के पश्चात साक्ष्य में ग्राहय है यदि वो उसकी मृत्यु के कारण एवं ऐसे समव्यवहार या परिस्थियों जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्युकारित हुई, के संबंध में किये गये हो धारा 32 के प्रावधानों का आकृषित करने के लिए अभियोजन को यह साबित करना होता है कि कथन ऐसे व्यक्ति के द्वारा किये गये है जो कि मर गया है या जो मिल नहीं सकता और जिसकी उपस्थिति बिना किसी विलम्ब या व्यय के उपाप्त नहीं की जा सकती और जो साक्ष्य देने में असमर्थ हो गया है और ऐसा कथन साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 की उपधाराओं (1) से (8) में विनिर्दष्टि परिस्थितियों के संबंध में किया गया है..... ।"

12. इस प्रस्तुत मामले से लगभग समान मामले में कनक सिंह राय सिंह बनाम गुजरात राज्य जो कि (एआईआर 2003 एससी 691) में प्रकाशित हुआ इस न्यायालय में दोषसिद्धी को अभिनिर्धारित किया, केरोसिन डालकर और उसकी पत्नी के आग लगाकर मृत्युकालिक घोषणा जो कि स्वेच्छिक एवं सत्य है ऐसा कोई कारण नहीं था जिसके आधार इसको स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। बाबुलाल बनाम मध्यप्रदेश राज्य जो कि (एआईआर 2004 एससी 846) खंड 7 में मृत्युकालिक घोषणा के संबंध में अनुसरण करते हुए निम्नानुसार पायाः-

"7..... एक व्यक्ति जो कि आसन्न मृत्यु का सामना कर रहा हो इस संसार में सतत रूप से रहने की आशा व्यावहारिक रूप से अस्तित्व में नहीं हो, झूठ बोलने के हेतुक को अभिलोप हो जाता है एवं मन शक्तिशाली नैतिक कारणों से केवल सत्य बोलने हेतु बदल जाता है। अति पवित्रता एवं गंभीरता मरने वाले व्यक्ति के शब्दों से जुड जाती है क्योंकि एक व्यक्ति जो कि मृत्यु के कगार पर हो झूठ बोलने की अपेक्षा नहीं की जा सकती तथा उसके द्वारा एक निर्दोष व्यक्ति को फंसाये जाने का मामला गढ़ने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। कहावत है "एक व्यक्ति अपने निर्माता से अपने मुंह में झूठ के साथ नहीं मिल सकता (निमो मोरी टूर्स प्रेजू मिटूर मैनटायर)। मैक्यू आर्नोल्ड ने कहा था, " एक मरने वाले व्यक्ति के होंठों पर सत्य होता है"। सामान्य सिद्धांत जिन पर कि साक्ष्य स्वीकार्य है

यह है कि वे घोषणाएं चरम सीमा पर की जानी चाहिए, जब पक्षकार मृत्यु के बिन्दू पर हो और जब संसार कि समस्त आशा लुप्त हो गई हो, झूठ का समस्त हेतुक मौन हो गया हो और मन शक्तिशाली सत्य बोलना चाहता हो, स्थिति इतनी पवित्र हो कि विधि इसको इस दायित्व के समान मानती हो जो कि एक न्यायालय में सकारात्मक शपथ दिलाई गई हो (आर.वी. वुडकाक 01 लीच 500 देखें) ‘‘

13.अपीलार्थी ने अभियोजन के मामले में संदेह उत्पन्न करना चाहा इस संबंध में हमें यह देखना होता है कि एक संदेह जो कि प्रकट किया गया है विश्वसनीय एवं तार्किंत होना चाहिए और युक्तियुक्त मस्तिष्क को आकर्षित करने वाला होना चाहिए। इस न्यायालय नें प्रमुख निर्णयों में इस संबंध में जो कहा है उसका हम लाभप्रद रूप से इसका उल्लेख कर सकते है कि शिवाजी साहेब राव बोबडे बनाम महाराष्ट्र राज्य जो कि (एआईआर 1973 एससी 2622) में प्रकाशित हुआ। जे. कृष्णा अय्यर ने खंड 06 में तीन न्यायाधीशों की पीठ के लिए निम्नलिखित टिप्पणी की:

‘‘6.....संदेह के लाभ के नियम के अतिशयोक्ति पूर्ण निष्ठा के खतरों में सामाजिक बचाव की लागत पर और संतुष्टि कारक भावनाओं की सभी प्रकार की दोषमुक्तियां अच्छी होती है पीडित और समुदाय के न्याय के अतिरिक्त समकालिन संदर्भ में विशेष जोर देने की मांग अपराध से पलायन को बढाना है न्यायिक विलेख का लोक के संदर्भ में जवाबदेही होती है।

हमारे कानून के माध्यम से पोषित सिद्धान्त या उचित संदेह से परे सबूत का धागा जो चलता है अस्वस्थ रूप से हर आशंका , हिचकिचाहट या संदेह डिग्री को गले लगाने के लिए फैलाया नहीं जाना चाहिए....."

"..... एक दोषी व्यक्ति को दोष मुक्त किया जाना हल्की बुराई के रूप में विद्वान लेखक ग्लेन विले विलियम्स ने "अपराध का सबूत" में माना है इसमें विवेक पूर्ण रूप से अवलोकन किया है कि इस साधाराण तथ्य से परे जाता है कि एक दोषी व्यक्ति को दंड नहीं मिला यदि अगुणात्मक दोषमुक्ति सामान्य हो जाये, उनसे विधि की निंदक अवेहलना को बढ़ावा मिलेगा और इससे लोगों में ऐसे व्यक्ति जो दोषी पाये गये है उनके विरूद्ध और भी कठोर दंड दिये जाने की कठोर विधिक उपराधारणों कि मांग बढ़ेगी। इस प्रकार बारंबार दोषियों की दोष मुक्ति से दंडात्मक विधि उद्दंड हो जायेगी, तथा इससे निर्दोष लोगों का न्यायिक संरक्षण नष्ट हो सकता है....."

".....दोषी व्यक्ति की दोष मुक्ति से और निर्दोष की दोषसिद्धी से न्याय की विफलता उत्पन्न हो सकती है.....।"

14.शिवाजी साहेब राव बोबडे में यह कथन उत्तर प्रदेश राज्य बनाम कृष्णा गोपाल (एआईआर 1988 एससी 2154) में प्रकाशित के अनुप्रमाणन में उल्लेखित किये गये थे और इस न्यायालय ने निम्नानुसार खंड 13 (एम.एम. वैंकटचलैया जे. जो कि उस समय थे के अनुसार) पाया:

"13..... संदेहो को युक्तियुक्त कहा जायेगा यदि वह अमुर्त अटकलों के उत्साह से मुक्त है। विधि सत्य के अतिरिक्त किसी और को पसंद नहीं कर सकती। उचित संदेह गठन के लिए एक अति भावनात्मकता से मुक्त होना चाहिए। अभियुक्त व्यक्ति की दोषता जो की सत्यता के संदेह वास्तविक और ठोस होना चाहिए। इसके अभाव में जैसा कि केवल मात्र अस्पष्ट आशंका का विरोध किया गया है। एक युक्तियुक्त संदेह काल्पनिक तुच्छ और केवल मात्र संभावित संदेह नहीं हो सकता किंतु एक सत्य संदेह कारणों पर और सामान्य संवेदना पर आधारित होता है यह मामले की साक्ष्य से उत्पन्न होना चाहिए.....।"

15.गुरूबचन सिंह बनाम सतनाम सिंह (एआईआर 1990 एससी 209) में प्रकाशित इस न्यायालय में खंड 4 के अंत में निम्नानुसार कहा है कि:

"4.... दीवानी मामलों की अपेक्षा दाण्डिक मामलों मंे सबूत का उच्च मानक होता है किंतु किसी भी मामले में कोई पूर्ण मानक नहीं हो सकता। लार्ड डेनिक के अवलोकन बटैर बनाम बटैर, (1950) 2 आॅल ई.आर. 458 पृष्ठ 459 पर देखें, किंतु संदेह युक्तियुक्त व्यक्ति का होना चाहिए। जिस मानका को गृहण किया गया हो वह मानक एक सामान्य प्रज्ञावान व्यक्ति के द्वारा ग्रहण किया गया होना चाहिए। वास्तव में यह मामलें एवं परिस्थितियों के आधार पर बदल सकता है। संदेह के लाभ के

नियम कि अतिश्योक्ति पूर्ण निष्ठा काल्पनिक संदेह या विलंबित संदेह के नियम के प्रति समर्पण को पोषित नहीं करना चाहिए और उससे सामजिक बचाव नष्ट नहीं होना चाहिए। न्याय इस अभिवाक पर निष्प्रभावी नहीं हो सकता कि यह अच्छा है। सैंकडों दोषी बच जाये किंतु एक निर्दोष को दंडित नहीं किया जावे। दोषी का बचना विधि की दृष्टि में न्याय नहीं है।''

16. इन प्रस्थापनाओं का लगातार इस न्यायालय के द्वारा गंगाधर बहेडा बनाम उडीसा राज्य (एआईआर 2002 एससी 3633), में प्रकाशित सूचा सिंह बनाम पंजाब राज्य (2003 (7) एससीसी 643 और लखन बनाम मध्य प्रदेश राज्य (2010(8) एससीसी 514) में लगातार अनुसरण किया गया है।

इस प्रकार निष्कर्ष है:

17. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि धारा 32 (1) साक्ष्य अधिनियम को अधिनियमित करते हुए विधायिका ने एक विशिष्ट पवित्रता मृतक व्यक्ति के द्वारा अपनी मृत्यु के कारण के संबंध में किये कथनों के संबंध में की है जो कि कथन करते समय पवित्रता के अवसर के कारण है। इसके बजाय कि ऐसे कथन मृतक व्यक्ति के द्वारा बिना किसी प्रभाव के शिघ्रतम अवसर पर कथन किये गये हो तथा उसकी मृत्यु के कारण के संबंध में कोई अन्य दृष्टिकोण पूर्णतः नहीं होना चाहिए। ऐसा कथन सत्य एवं सुसंगत रूप से स्वीकार होना चाहिए जिससे कि उसकी मृत्यु के

परिणाम वाली परिस्थितयां स्पष्ट रूप से प्रकट होती हो। इसकी सुसंगतता किसी भी पुष्टि के अभाव में कम नहीं होती। अतिश्योक्ति पूर्ण संदेह समपुष्टि के अभाव में, अगुणात्मक दोषमुक्ति को बढ़ावा देगी जिससे न्याय एवं सामजिक संरचना को गंभीर क्षति कारित होगी। पत्नियों को आग से जलाये जाने की घटना के कारण जो कि हमारे समाज में दुर्भाग्यपूर्ण रूप से लगातार जारी है न्यायालयों से यह आशा की जाती है कि ऐसी स्थिति में उनकी सोच सावधानीपूर्वक होनी चाहिए। अतार्किक संदेहों की अपेक्षा मृत्युकालिक घोषणाओं को सम्यक रूप से विचार में लिया जाना चाहिए।

18. प्रस्तुत मामलें में शिघ्र अवसर पर दो प्रकार की मृत्युकालिक घोषणाएं लेखबद्ध की गई जिनमें अपराध का हेतुक एवं मृतका को किस कारण से जलने की चोटें कारित हुई कारण शामिल था। जैसे कि अपीलार्थी का लालच जिसे माने जाने से मृतका ने इंकार कर दिया जहां तक उसके कथन जैसे कि अपीलार्थी ने उसके ऊपर केरासिन डाला और उसके आग लगा दी इसको इंकार किये जाने को कोई कारण नहीं था तथा इसको शीघ्रतम एवं पवित्र अवसर पर किया गया था बचाव पक्ष के द्वारा जो कहानी प्रस्तुत की गई है वह अभिलेख पर प्रस्तुत तथ्यों के आधार पर पूर्णतः असंगत है। जो कि पश्चातवृति सोच होने के कारण स्वीकार्य है। वास्तव में यह मामला स्पष्ट रूप से पूर्णत्या मिथ्या बचाव प्रस्तुत करने का

प्रयास दर्शित करता है। अभियोजन ने अपना मामला युक्तियुक्त संदेह से परे साबित किया है।

19. उपरोक्त विधिक स्थिति एवं अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों को ध्यान में रखते हुए विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा दिये गये निर्णय एवं आदेश जो कि उच्च न्यायालय के द्वारा पुष्ट किया गया उसमें हस्तक्षेप करने को कोई कारण नहीं पाते है।

20. अतः अपील खारिज की जाती है।

अपील खारिज।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मनोज कुमार निमोरिया आर.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझााने के सीमत उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक एवं आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्यवन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।